Anna Hazare, the anti corruption crusader has taken several steps in his village Ralegan Siddhi to promote water conservation and environmental practices. Also, with the rise in environmental consciousness in the post covid era, his works and actions have become more relevant and eye catching in the contemporary scenario.

Besides this, there are several examples like Rajendra Singh from Rajasthan and Simon Oraon from Jharkhand have established themselves as water conservation activists. Rajendra Singh has also been awarded Magsaysay award for his water conservation efforts.Water crisis problem can also be handled by the agricultural department in an amicable manner by the judicious use of water and water resources over a long period of time. This has been made possible by the use of rain water harvesting too. Agriculture in Punjab and Haryana, Rajasthan and Gujarat are burning examples.

The main challenges before the water conservation project at the overall level are – to preserve the existence of water resources, water pollution and the rise of community awareness regarding it and the most serious challenge- recognition and generation, including preservation of drinking water resources. Without proper drinking water resources, people are prone to many health diseases, especially those with scarce water resources areas like desert and coastal regions. So, conservation of water resources is both, the duty and right of the people of a country, as it adds to overall social, economic and cultural well being and progress.

****

Bibliography –

Books and Compendiums –

1. Aayog, NITI , Composite Water Management Index, March, 2017, pp. 8-12.
2. Aayog, NITI , Composite Water Management Index, July, 2023, pp. 49-50.
3. Aayog, NITI , Composite Water Management Index, July, 2023, pp. 10-14.

Websites-

1. https://pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1911249

आज का सार्वभौमिक प्रश्न: युद्ध या मानवाधिकार?

प्रो. कन्हैया त्रिपाठी
(लेखक भारत गणराज्य के महामहिम राष्ट्रपति जी के विशेष कार्य अधिकारी रह चुके हैं)

सारांश: *युद्ध के समय हमारे मानवीय पक्ष समाप्त हो जाते हैं. केवल संप्रभुता एवं बर्चस्व की लड़ाई होती है. युद्धों के इतिहास यह बताते हैं कि इसमें धन-जन-सम्मान सबका नाश होता है। संघर्ष उसके बाद भी कायम रहता है। क्योंकि बचे हुए लोगों के जीवन और जीवनोपयोगी संसाधनों की भी बहुत दुर्दशा होती है। ऐसे में, मानवाधिकार कैसे सुरक्षित रह सकते हैं? इसके लिए बड़े पैमाने पर आह्वान और संवेदनाओं की बरसात होती है लेकिन युद्ध से रिक्त लोगों, धन-जन और अवसर की भरपाई के दुष्परिणाम राष्ट्र भी भोगते हैं। आखिर युद्ध हमारे लिए संकट के विषय हैं तो फिर इनका दुहराव क्यों होता रहता है, सवाल यह है। इस प्रपत्र में हाल ही में यूक्रेन और रूस के युद्ध को ध्यान में रखकर संघर्ष और मानवाधिकारों पर चिंता व्यक्त की गई है। साथ ही, इस प्रपत्र में युद्ध के संकट से उपजे जन-धन-संपदा और मनुष्यता की कई बर्बर कार्यवाही को रेखांकित करते हुए इससे कैसे मुक्त रहा जा सकता है, इस पर विचार किया गया है।*

की-वर्ड:- मनुष्य, युद्ध, संघर्ष, स्वतंत्रता, मानवाधिकार एवं भविष्य

सभ्यता विमर्श में हमारे लिए कई चीजें प्रत्यक्ष प्रश्न बनती हैं, तो कुछ चीजें परोक्ष रूप से। मनुष्य ने अपने जीवन में इन्हीं प्रश्नों का सामना किया है। अब जब सैमुअल हर्टिंगटन जैसे अध्येता क्लैस ऑफ़ सिविलाइजेशन के माध्यम से विमर्श को रोमांचक विमर्श में परिवर्तित कर रहे हैं, तो किसी को यह समझना मुश्किल हो जाता है कि हम किसी सार्थक नतीजे पर बहस को ले जाकर कोई सैद्धांतिकी में आमूलचूल परिवर्तन कर पाएंगे या नहीं? लेकिन जो भी हो हमारे सोचने-समझने का तरीका बदला है और इसमें और बदलाव भी आने वाले समय में होगा, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। संयुक्त राष्ट्र महासभा अध्यक्ष चबा कोरोसी ने अपने एक संबोधन में कहा, “हमें अभी तक नए युग का नाम तक नहीं मिला है, हम अभी तक इसका वैज्ञानिक रूप से वर्णन नहीं कर सकते हैं, लेकिन हमें लगता है कि यह आ गया है। हमारे वैश्विक सहयोग की बुनियादी शर्तें बदल गई हैं। हम अब एक अलग दुनिया में रहते हैं।”[1] इस बदलाव में सभ्यतागत और सांस्कृतिक रूप से बदलाव का रेखांकन एक न एक दिन होगा ही। किंतु राज्य जो शासन और संस्थागत संस्कृति के प्रतिमान हैं, उनके बीच में अंतर्कलह बहुत से नए सवाल पैदा करेंगे। जो सकारात्मक बदलाव की उम्मीद कर रही है पूरी दुनिया वह तो हम नहीं देख सकेंगे। जिन देशों में युद्ध हो रहे हैं और परमाणविक धमकियां भी आ रही हैं, वे हमारी मनुष्यता के लिए चुनौती है। हम जानते हैं कि संघर्ष के अनेकों स्वरूप हैं और पृथ्वी पर रहने वाले हर

प्राणी इस संघर्ष से विरत नहीं है। हर व्यक्ति का समय के साथ युद्ध है, क्योंकि न जाने कितनी चुनौतियाँ हैं हर व्यक्ति के जीवन में। यद्यपि इसे न ही उतना रेखांकित किया जाता है और न ही इसकी व्याख्या होती है। चर्चाएँ तो मानव-प्रायोजित युद्ध के ही होते हैं, और संघर्ष की अनेकों गाथाएं भी इन्हीं की लिखी जाती हैं। बड़ी संख्या में विस्थापन, हिंसा, अनिवासी होने के दर्द एक तरफ हैं, तो पर्यावरण और स्वास्थ्य के खतरों से जूझता मनुष्य कभी गरीबी, भुखमरी और भय का शिकार हो रहा है, तो कभी उसके भीतर की क्रूरता जागृत हो जा रही है। भोग तो अंततः मनुष्य करता है, इसलिए राज्य भी तो उसी के द्वारा शासित, अनुशासित और नियंत्रित है। प्रत्येक राज्य की सीमाएं इसीलिए उसके बस में हैं, और वह अपनी संप्रभु-शक्ति को सतत बनाये रखने के लिए युध्द तक कर रहा है। विश्व में जितने भी युद्ध हो रहे हैं, उसके पीछे मनुष्य की अपनी महत्वाकांक्षा, सीमा-विस्तार, प्रभुत्त्व कायम करने की चेष्टा ही दोषी है। इसलिए यह संघर्ष भी बड़े पैमाने पर हमें मनुष्यों द्वारा सहन करते हुए देखने को मिल रहा है। सवाल यह है कि क्या यह मनुष्य जनित समस्या है युद्ध और संघर्ष? क्या यह राज्य की समस्या नहीं है? नहीं, ऐसा नहीं है। राज्य जब अपने अस्तित्व के साथ संघर्षशील हो जाते हैं, तो इस संघर्ष का स्वरूप बदल जाता है, और वे ज्यादा जिम्मेदार होते हैं क्योंकि यह शासित द्वारा उसकी महत्वाकांक्षा से उत्पन्न संघर्ष होता है। एक समय आता है कि यह युद्ध जैसी भयावह स्थिति के रूप में तब्दील हो जाता है। ऐसे में, राज्य तो सबसे ज्यादा अहितकर निर्णय लेकर कभी-कभी बड़े जनमानस को प्रभावित करते हैं। प्रथम विश्वयुद्ध हो या द्वितीय विश्वयुद्ध दोनों की अवस्थाओं और परिणामों का आंकलन करें तो सिहरन ही हो जाती है कि मनुष्य समाज ने कितनी भयावह स्थितियों का सामना किया है। नागासाकी और हिरोशिमा में आज भी अपंगता के साथ जीवन जीने पर विवश मनुष्य, क्या इस मनुष्य सभ्यता और राज्य की महत्वाकांक्षाओं को प्रश्नांकित नहीं करते? होलोकॉस्ट की चर्चा होती है।

होलोकॉस्ट स्मरण ज़रूरी :-

यह एक प्रकार का नरसंहार था- इस घटना के साथ प्रलय सी स्थिति में हमारी सभ्यता पहुँच गई और उस होलोकॉस्ट के दुष्परिणाम पर आए दिन चिंताएं व्यक्त की जाती रही हैं। '77 वर्ष पहले, ऑशवित्ज़ प्रताड़ना शिविर को आज़ाद कराए जाने के साथ, हॉलोकॉस्ट रुक गया था. मगर वो समय, इस तरह के अपराध फिर कभी ना हों, ये सुनिश्चित करने के हमारे प्रयासों की शुरूआत थी' –एंतोनियो गुटेरेस के शब्द।[2] पार्क ईस्ट सिनेगॉग के रब्बाई (धार्मिक विद्वान) आर्थर श्नीयर जो स्वयं हॉलोकॉस्ट के भुक्तभोगी थे, उनकी अपनी आत्मा की आवाज़ को हॉलोकॉस्ट के सन्दर्भ में समझें- जीवित बचने के साथ ही, मैंने ये प्रतिज्ञा ली थी कि मैं अपना जीवन यहूदी विरोध-वाद और किसी भी तरह की नफ़रत का उन्मूलन करने में मदद के लिए समर्पित कर दूंगा, ताकि किसी अन्य आबादी को उसी तरह के अत्याचारों का सामना ना करना पड़े, जैसे अत्याचार यहूदी लोगों पर किये गए थे।[3] किसी भी युद्ध का वीभत्स स्वरूप होलोकॉस्ट का रूप ले सकता है इसलिए ऐसे क्रूर सचाई के सन्दर्भ में जिन्होंने संघर्ष किया है, वह मानवाधिकारों के हनन की किस पराकाष्ठा को अपने हृदय में दबाकर आगे बढे हैं, इसे समझा जा सकता है। नेतान्याहू को अपने बयान पर सफाई देनी पड़ी थी 2015 में और होलोकॉस्ट के विद्रूपता को उसी रूप में स्वीकार करना पड़ा था जो उसकी तथ्यात्मक व्याख्या है।

होलोकॉस्ट को स्मरण रखने की बातें की जा रही है, तो इसके पीछे बड़ा उद्देश्य छिपा हुआ है। ऐतिहासिक तथ्यों को सहेज कर रखना और इतिहास को तोड़-मरोड़कर पेश करने को चुनौती देना, इन प्रयासों का अहम हिस्सा है। अतीत, वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों की भलाई की ख़ातिर, हमें ये सुनिश्चित करना होगा कि मानवता, इन भीषण और घातक अपराधों को कभी ना भूले।[4] मनुष्यता की रक्षा और सभ्यता के बचाव के लिए उस विशेष घटना का ध्यान रखना आवश्यक माना जा रहा है। यह मानवाधिकार की सततता के लिए भी आवश्यक है। निवर्तमान यूएन मानवाधिकार प्रमुख मिशेल बाशेलेट के बयान स्मरण हो आते हैं। मिशेल बाशेलेट ने यहूदियो के जनसंहार–हॉलोकॉस्ट को भयावह हैवानियत का अपराध क़रार दिया और ध्यान दिलाया था कि पूरे योरोप में, साठ लाख यहूदियों, रोमा और सिण्टी लोगों, दासों, विकलांगता वाले लोगों, एलजीबीटी लोगों, युद्ध बन्दियों और नाज़ी नैटवर्कों के विरोधी सदस्यों को क्रूरतापूर्वक मार दिया गया था। ...हॉलोकॉस्ट को याद करना एक अनिवार्य काम है, क्योंकि इन अपराधों से ये झलकता है कि नफ़रत फैलाव के परिणामस्वरूप, कितनी घातक त्रासदियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।[5]

संघर्ष की आतंरिक और बाहरी चुनौतियों को सामना किया जा सकता है लेकिन अतीत को भुलाना एक बड़ी भूल मानी जा रही है। हम अपने अतीत से फिर किसी भूल और नफ़रत के शिकार नहीं हों, इसके लिए होलोकॉस्ट स्मरण आवश्यक माना जा रहा है। मानवाधिकारवादी कार्यकर्ताओं, पैरोकारों और नफ़रत के खिलाफ आवाज़ उठाने वाले लोगों ने एक स्वर में इसको अपनी स्मृतियों में रखने का आह्वान किया है।

युद्ध और मानवाधिकार की विसंगतियाँ:-

युद्ध एक मनोविकार है। इसके पीछे पूर्णतया मनोविज्ञान छिपा हुआ है। इसे समझना आवश्यक है। मानवाधिकार तो मनुष्य के लिए एक श्रेष्ठ अवस्था है। लेकिन मानवाधिकार के साथ भी विभिन्न विसंगतियाँ हैं। दोनों के बारे में युद्ध और मानवाधिकार के विशेषज्ञ इसपर भी सहमत नहीं हैं कि दोनों विसंगतियों से जूझ रहे हैं लेकिन इनके मनोविज्ञान को समझते हुए यह पता चलता है कि इसमें कहीं न कहीं विसंगतियाँ हैं। राज्य अपने-अपने संप्रभु क्षेत्र में इसको पूर्णतया लागू नहीं कर पा रहे हैं। कभी-कभी राज्य को यह लगता है कि राज्य यदि पूर्णतया मानुषी केन्द्रित हो जाएंगे तो उनके संसाधन और

आर्थिक समस्याएं उन्हें जकड़ लेंगी। इससे भी मानव अधिकारों का हनन होता है। अनेक देशों में राजनीतिक दल की की आपसी गुटबंदी और हित इन मानव अधिकारों के हनन में सहायक बन जाते हैं। यथा-कोई योजना पूर्ववर्ती विपक्षी पार्टी की सरकार द्वारा लायी गयी, वह सत्ता में मात देकर आई पार्टियां उन्हें सही और गलत के बहस में या अपने राजनीतिक लाभ की दृष्टि से अपनी नई चीजों को प्रस्तुत कर देती हैं। ऐसे में, अनेक उन वर्गों का लाभ होता है जो उनके पक्ष में रहते हैं लेकिन जो उन्हें किसी तरीके से अपने एजेंडे में फिट नहीं बैठते उन्हें मानव अधिकारों के अतिक्रमण के लिए तैयार रहना पड़ता है। यह सामान्य विसंगति नहीं है। बहुत से देशों में रंगभेद और अल्पसंख्यकों के मामले प्रकाश में आते रहते हैं। चीन में मुस्लिमों की स्थितियाँ बहुत चिंताजनक बताई जाती हैं। बांग्लादेश और पाकिस्तान में अल्पसंख्यक हिंदुओं पर आवाज़े उठती हैं और भारत में भी अल्पसंख्यक मुसलमानों के बारे में ऐसे मुद्दे बार-बार प्रकाश में आते हैं। इसमें युद्ध युद्ध और मानवाधिकार के विशेषज्ञ विसंगतियों को तलाशने की कोशिश करते हैं। इसे गलत नहीं माना जाना चाहिए बल्कि मानव अधिकारों के संदर्भ में ऐसे सवाल उठने भी चाहिए क्योंकि सवाल राज्यों को सतर्क करते हैं और सतर्क राज्य अपने नागरिकों का ज्यादा ख्याल रख पाते हैं।

प्रोफेसर निगेल मैकलेनन का एक प्रपत्र 'द साइकोलॉजी ऑफ वार' हाल ही में साइक्रेग में प्रकाशित हुआ था। उनका मानना है कि, 'युद्ध मानवीय स्थिति का इतना हिस्सा लगता है कि यह पूछना वाजिब है: क्या मनुष्य युद्ध के लिए कठोर हैं? क्या आनुवांशिकी लोगों को युद्ध के लिए प्रेरित करती है ताकि संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा करने वाले 'अन्य' के जीन को नष्ट करने के बाद उनके जीन को बेहतर ढंग से पुन: उत्पन्न किया जा सके? कई मानवविज्ञानी और पुरातत्वविदों ने सबूत प्रदान किए हैं कि मानव युद्ध लगभग 6000 से 10000 साल पहले उभरा था। युद्ध का उद्भव कृषि प्रणालियों और समाजों के निर्माण के साथ मेल खाता है। इसने भोजन के बड़े पैमाने पर उत्पादन के कई लोगों को शिकार और इकट्ठा करने के कभी न खत्म होने वाले चक्र से मुक्त कर दिया। बदले में, इसने कुछ लोगों को दूसरों के श्रम पर जीवित रहने में सक्षम बनाया, एक 'नेतृत्व' वर्ग तब उभरा। यदि कुछ लोगों के पास खाली समय और इसे निर्देशित करने की स्थिति के बाद ही युद्ध शुरू हुआ, तो यह इंगित करता है युद्ध की इच्छा कठोर नहीं है, या, यदि कठोर है, तो युद्ध की इच्छा के लिए आवश्यक है कि समय और संसाधन उपलब्ध हों जिसमें ऐसे किसी भी जीन को व्यक्त किया जाना है।'[6] यह एक आंकलन है और इस आंकलन को झुठलाया भी नहीं जा सकता। उत्तरोत्तर प्रो. अपने अध्ययन में यह व्यक्त करते हैं कि, 'पूरे इतिहास में राजनेताओं ने लोगों को 'देशों' जैसे मनमाने विचारों पर बड़े पैमाने पर हत्या करने का निर्देश दिया है। 'राजनीति में प्रवेश करने वाले लोगों के प्रकार से युद्ध एक जहरीला दुष्प्रभाव हो सकता है। व्यापक रूप से राजनीतिक प्रणालियों में फलने-फूलने के लिए जिन विशेषताओं को आवश्यक माना जाता है, वे हैं: झूठ बोलना, संकीर्णता और मनोरोगी। शायद यह कई राजनीतिक "नेताओं" का बेकार मनोविज्ञान है, जो युद्ध की ओर ले जाता है; सत्ता से चिपके रहने के अपने प्रयासों में वे कोई भी सिद्धांत त्याग देते हैं, कोई भी झूठ बोलते हैं, और कोई भी कार्य करने का आदेश देते हैं।.....देशभक्ति बदमाशों की अंतिम शरणस्थली है', इससे पहले विंस्टन चर्चिल ने भी 'देश' के विचार की शरण ली थी।'[7] यदि किसी अध्येता के निष्कर्ष को पूर्णतया न भी मानिता मिले, तो भी अकादमिक बहस में युद्ध के मनोविज्ञान को समझने के लिए आधार और सूत्र तो माना जा सकता है जो युद्ध के साथ मानुषी सभ्यता की विसंगतियों को रेखांकित करने के लिए ज़रूरी हैं और एक दृष्टि प्रदान करता है।

कृषि परंपरा के साथ संघर्ष की आशंका तो व्यक्त की जा सकती है लेकिन कृषि-कल्चर से युद्धों को जोड़कर देखा भी जा सकता है। जेबी हमारे विकास का मापदंड केवल कृषि थी तो उस समय के संघर्ष, अंतरद्वंद्व तो उन्हीं परिप्रेक्ष्य में देखना होगा। अब सभ्यता का विकास हुआ। राज्यों का अस्तित्व और संप्रभुता की एक व्यापक समझ से मनुष्य सभ्यता संचालित होने लगी तो उसे इस परिप्रेक्ष्य में समझना आवश्यक है और उसे उसी संदर्भ में आज देखा भी जा सकता है क्योंकि विश्व में अधिकांश जगह तो राज्य ही शासन करके अपने परिक्षेत्र में मनुष्यता के और मनुष्यों के मानवीय पक्ष की सुरक्षा के पैरोकार बनते हैं। आज जो परिस्थितियाँ बनी हुई हैं दुनिया भर में, ऐसी परिस्थिति में तो राज्यों के युद्ध और मानवाधिकारों को भी समझना होगा ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इनका मनोविज्ञान क्या है।

युद्ध और मनवाधिकारों का अंतर्संबंध:-

मानवाधिकारों और सशस्त्र संघर्ष के बीच संबंध धार्मिक, दार्शनिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, जातीय, नस्लीय लैंगिक और अंतरराष्ट्रीय कानूनी विद्वानों के बीच न्यायोचित युद्ध की प्रकृति और युद्ध में उचित आचरण के बारे में ऐतिहासिक बहस में निहित है, जो अंतरराष्ट्रीय मानवीय कानून को भी रेखांकित करते हैं। मानवाधिकारों, युद्ध और संघर्ष के बीच संबंधों की समझ संघर्ष विश्लेषण से शुरू हो सकती है, क्योंकि मानवाधिकारों का उल्लंघन संघर्ष का कारण और परिणाम दोनों हो सकता है। इसका भयानक स्वरूप युद्ध हैं। इसके और भी अनेक कारण हमें विश्लेषण से मिलेंगे और उस पर प्रायः चर्चा संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार सुरक्षा परिषद में भी होती रही है। युद्ध की विभीषिका झेल रहे राज्य इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। शरणार्थी-लोग इसके उदाहरण हैं। आर्थिक-मामले और अन्य संप्रभुता के लिए लड़ाई लड़ने वाले राज्य इसके उदाहरण हैं। परमाणु-सशक्तीकरण की होड़ इसके उदाहरण हैं। मानव अधिकारों का हनन हथियारों की सशक्तीकरण के कारण है। धन का अपव्यय युद्ध और हथियार के एकत्रीकरण में जब होने लगेंगे तो उसका धन का संबंध नागरिकों से जुड़ा हुआ है कि नहीं इसका जवाब यदि तलाशा जाए तो युद्ध और मानव अधिकार के अंतर्संबंध भी समझ आने लगेंगे।

मानवीय इच्छाओं और व्यवस्था की इच्छाओं में इतना अंतर बढ़ गया इससे मानव अधिकारों का हनन ज्यादा होने लगा है। संघर्षरत लोग और मशीनीकृत व्यवस्था के साथ बाज़ार की होड़ युद्ध के कारण हैं और मनवाधिकारों के हनन के कारण भी हैं।

मानवाधिकारों का संरक्षण आवश्यक:-

वर्टेण्ड रसल ने एक महत्वपूर्ण बात की थी कि सभी मानव गतिविधि इच्छा से प्रेरित हैं। इच्छाशक्ति का होना जहां आवश्यक है वहीं इच्छाओं को अनुशासित करना भी आवश्यक है। यदि इच्छाशक्ति का दुरुपयोग हो और उसको मनुष्यता के खिलाफ खड़ा किया जा रहा हो तो वहाँ मानव अधिकारों का हनन संभव है। युद्धरत देशों के लिए संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार सुरक्षा परिषद की एडवाइजरी ऐसे समय में काम नहीं आ रही है क्योंकि वहाँ इच्छाशक्ति से युद्ध लड़े जा रहे हैं और लाखों लोग जीवन में जो दिन नहीं देखने थे, उन्हें देखने पड़ रहे हैं। व्यक्ति की इच्छाशक्ति और राज्य की इच्छाशक्ति मानव अधिकारों के हनन के लिए यदि काम करने लगेंगी तो निःसन्देह उससे मनुष्यता का नाश होगा। यूक्रेन और रूस में जो आज हो रहा है या पहले जो ईराक और अमेरिका के बीच या इज़राइल और फिलीस्तीन के बीच हुआ उसे हम मानवाधिकारों के बड़े पैमाने पर हनन करने वाले उपक्रम के रूप में चिन्हित कर सकते हैं और उस पर सवाल खड़ा कर सकते हैं। इन सभी घटनाओं में इच्छाशक्ति के गलत प्रयोग दिखाई देते हैं। राज्यों की इच्छाशक्ति और समुदायों या व्यक्तियों की इच्छाशक्ति संघर्ष और युद्ध का रूप न लें इसके लिए जितनी भी पहल हुई वह नाकाफी लगती हैं।

सवाल यह है कि जब राज्य भी जानते हैं कि मानव अधिकारों का हनन ठीक नहीं है और इतने सारे वृहद पैमाने पर अपील भी हो रही है दुनिया भर में तो कोई न कोई ऐसी चीज है जो हमारे मानवाधिकारों को सुरक्शित और संरक्षित करने में विफल हैं।

डिप्लोमेसी-कूटनीति को विकल्प के रूप में देखा जाता है जो कि कई देशों के भीतर शांति स्थापित करने में सफल भी हुई हैं लेकिन कूटनीति की भी सीमाएं होती हैं जो किसी बिन्दु पर जाकर ठहर जाती हैं और देश युद्धरत और संघर्षरत बने रहते हैं। संयुक्त राष्ट्र की राजनीतिक मामलों की प्रमुख रोज़मैरी डीकार्लो ने ज़ैपोरिझझिया परमाणु संयंत्र में मौजूदा स्थिति पर गहरी चिन्ता व्यक्त की, जोकि योरोप का सबसे विशाल परमाणु ऊर्जा प्लांट है। उन्होंने कहा कि बीते सप्ताहान्त, इस परमाणु संयंत्र पर गोलाबारी होने की ख़बरें थीं, इसके बावजूद इस परमाणु ऊर्जा प्लांट में महत्वपूर्ण उपकरणों को कोई हानि नहीं पहुँची है, और तत्काल कोई परमाणु सुरक्षा चिन्ता की बात नहीं है...ये केवल सौभाग्य की बात है। हम नहीं जानते कि ये सौभाग्य कब तक जारी रहेगा। विश्व एक और परमाणु युद्ध का जोखिम बिल्कुल भी नहीं उठा सकता है।[8] यदि राज्य अपनी बर्बर, विघटनकारी और हिंसक इच्छाशक्ति पर नियंत्रण नहीं रख सके तो संघर्ष और मानवाधिकार के प्रश्न और गंभीर होंगे। वर्टेण्ड रसेल ने उन्हीं दुराग्रही इच्छाशक्तियों का समान करने का आग्रह किया है।

दुनिया के शांतिवादी आंदोलन और शांतिवादी लोगों के भीतर जिस चेतना को प्रज्ज्वलित होना चाहिए वह कदाचित अब तक नहीं हो सकी जिससे आने वाले समय में भी स्थितियाँ सुधरेंगी इसके आसार नहीं हैं लेकिन सकारात्मक सोच और सतत सभ्यता के हिमायती इसकी संभावना से इनकार भी नहीं करते। डॉ. राधाकृष्णन ने बहुत महत्त्वपूर्ण बात लिखी है अपनी पुस्तक 'पूरब और पश्चिम' में की, 'सभी धर्म पड़ोसी से प्रम करने का उपदेश देते हैं, किन्तु प्रेम करने की क्षमता पा सकना कठिन काम है।'[9] यदि संसार के लोग प्रेम की स्थापना कर पाते तो शायद मानव अधिकारों का सबसे ज्यादा संरक्षण होता। प्रेम की भाषा बोल देंगे, प्रेम का संदेश दे देंगे और प्रेम उपस्थित ही नहीं होगा तो वह तो मिथ्यालाप हो गया। इसलिए यह आवश्यक है कि असत्य से परहेज करें। सत्य ही प्रेम का स्वरूप है तो हम इनके माध्यम से समस्त संघर्ष, बर्बरता और युद्ध की विभीषिका का शमन कर सकते हैं। तब तो यही अंगीकार करना आवश्यक है और यदि ऐसा होता है तो मानव अधिकारों का हनन होगा ही नहीं और मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए इस प्रकार की कोई कोशिश भी करने की आवश्यकता नहीं होगी। डॉ. राधाकृष्णन ने यह लिखा है कि, 'इतिहास अप्रत्याशित की कहानी है....आज हमें अपने ही मस्तिष्कों और हृदयों के बल पर नए सिरे से शुरू करना है।'[10] यह शुरुआत कैसी हो, अब इसे भी हमें ही तय करना है। यदि हमारी शुरुआत नए सिरे से मनुष्यता और प्रकृति के नवोन्मेष की गाथा बनेगी तो निःसन्देह प्रेम-पूर्वक, सौहार्दपूर्ण वातावरण में हम नई पीढ़ी को ले जाने में सक्षम होंगे।

महाभारत में पितामह भीष्म और युधिष्ठिर संवाद है। यह संवाद शांतिपर्व में है। इसमें उन मूल्यों को बताया गया है जो मनुष्य जाति की श्रेष्ठतम आचरण पद्धति हो सकती है। इसमें उन गुणों की स्थापनाएं हैं जिससे व्यक्ति ईश्वरत्व को प्राप्त करने में सक्षम बन सकता है। ईश्वरत्व को प्राप्त करना भी प्रेम का अधिष्ठान है। इस अनुभूति से संपूरित लोग ही मानवाधिकारों का संरक्षण करते हैं। 'सभी धर्मों के सच्चे उपदेश का सार यही है कि मनुष्य सृष्टिकर्ता परमात्मा के ही समान पवित्र आत्मा है। मानुषी का काम अपनी इच्छा को पूरा करना है। परमात्मा की इच्छा है कि मनुष्य की भलाई हो। मनुष्य की भलाई प्रेम से ही हो सकती है। और प्रेम का व्यवहार वास्तव में यही है कि हम दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करें, जैसा हम चाहते हों कि दूसरे हमारे साथ करें। यदि इस धर्मोपदेश को समझकर सब लोग इस पथ पर चलें तो सर्वत्र प्रेम का ही व्यवहार हो। फिर ऐसी कोई बात ही नहीं रह जाय जिसके कारण दबाव, शक्ति, ज़ोर या ज़ुल्म की जरूरत हो।'[11] इससे यह पता चलता है कि युद्ध की शून्य संभावना होती है फिर भी युद्ध हो रहे हैं, संघर्ष तो नानाप्रकार के हैं। हमें युद्ध और संघर्ष-शून्य बनाकर समाज की संरचना प्रतिष्ठित करनी है, तो इसका एक मात्र विकल्प है-प्रेम। महात्मा गांधी ने स्पष्ट किया था की, 'मेरे मन में कोई दुविधा नहीं है। मुझे अपने कर्तव्य का स्पष्ट भान है। अहिंसा और सत्या

को छोडकर, हमारे उद्धार का कोई दूसरा रास्ता नहीं है। मैं जानता हूँ कि युद्ध एक तरह की बुराई है और शुद्ध बुराई है। मैं यह भी जानता हूँ कि एक दिन इसे बंद होना ही है। मेरा पक्का विश्वास है कि खूनखराबी या धोखेबाज़ी से ली गई स्वाधीनता, स्वाधीनता है ही नहीं। इसकी अपेक्षा कि मेरे किसी काम से अहिंसा का सिद्धांत ही गलत समझा जाय या किसी भी रूप में मैं असत्य और हिंसा का हामी समझा जाऊँ, यही हज़ारगुना अच्छा है कि मेरे विरुद्ध लगाए गए सभी अपराध अरक्षणीय, असमर्थनीय समझे जाएँ। संसार हिंसा पर नहीं टीका है, असत्य पर नहीं टिका है किन्तु उसका आधार अहिंसा है, सत्य है।[12]

वस्तुतः हम गांधी के अंतस की आत्मशक्ति को मान सकते हैं। वह युद्ध शून्य पृथ्वी की कल्पना करते हैं, किन्तु यह स्वीकार करना ज्यादा अच्छा है कि प्रेम, सत्य और अहिंसा मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु सार्वभौम स्वीकृति हो सकती है, और इसकी शुरुआत और विस्तार हमें ही करना होगा।

****

सन्दर्भः-

1. यूएनजीए की आम बहस के समापन पर पीजीए की टिप्पणी, 26 सितंबर, 2022
2. https://news.un.org/hi/story/2022/01/1052402
3. https://news.un.org/hi/story/2020/01/1022012
4. https://news.un.org/hi/story/2022/01/1052462
5. Ibid
6. **Professor Nigel MacLennan, The Psychology of War,**
7. **https://www.psychreg.org/psychology-war/** 07 March 2022
8. Ibid
9. https://news.un.org/hi/story/2022/11/1064397
10. डॉ. राधाकृष्णन, पूरब और पश्चिम, अनु. रमेश वर्मा, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 1981, पृ. 141
11. वही, पृ. 131
12. द्रष्टव्य: भूमिका, एक ही आवश्यक बात (महात्मा टॉलस्टॉय की पुस्तक द वन थिंग नीडफुल), अनु. प्रो. श्री जगतनारायण लाल, रामदेव प्रसाद सिंह, मुरादपुर, पटना सन 1981 पृष्ठ- XXXVI
13. महात्मा गांधी, युद्ध और अहिंसा, सर्वोदय साहित्यमला 108वां ग्रंथ, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, 1941, पृष्ठ-192 द्रष्टव्य: हिन्दी 'नवजीवन', 20 सितंबर, 1928

पता: पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय, भटिंडा (पंजाब), मो. 9818759757
ईमेल: hindswaraj2009@gmail.com या Kanhaiya.tripathi@cup.edu.in
वेबसाइट: www.kanhaiyatripathi.com

बुंदेलखण्ड़ क्षेत्र में बौद्ध मूर्ति शिल्पांकन

(छतरपुर,तेवर त्रिपुरी,के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. प्रमेश दत्त शर्मा
नगर निगम संग्रहालय,ग्वालियर (म.प्र.)

प्रस्तावना

बुंदेलखंड़ मध्य भारत का एक प्राचीन क्षेत्र है। भौगोलिक और संस्कृतिक विविधताओं के बावजूद बुंदेलखंड़ में जो एकता और समरसता है, उसके कारण ये क्षेत्र स्वय में अनूठा बन पड़ता हैं। राजनीतिक रूप से इसमें उत्तर प्रदेश के सात (07) जिले एवं मध्य प्रदेश के छः (06) जिले सम्मिलित है। बुंदेलखण्ड़ का इतिहास आरम्भ से गौरवशाली रहा है। बुंदेलखण्ड़ क्षेत्र में बौद्ध मूर्तिकला का आरंभ मौर्यकाल में अशोक के शासन काल से आरंभ होता है। मौर्य के उपरांत बौद्धमूर्ति कला के उदाहरण शुंग,सातवाहन, कुषाण,गुप्त, चंदेल, एवं कलचुरी काल में हमें बुन्देलखण्ड एवं उसके समीपस्थ क्षेत्र जैसे छतरपुर ,त्रिपुरा, दतिया, रीवा, सतना,पन्ना आदि स्थलों में देखने को मिलते हैं। भारत के पूर्वी क्षेत्र से भिन्न इस क्षेत्र के बौद्ध मूतिशिल्प में सौम्य रूप के दर्शन होते हैं। तेवर (त्रिपुरी),छतरपुर आदि क्षेत्रों के बौद्ध मूर्ति शिल्पाकंन इसके उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

भारतीय उपमहादीप में भौगोलिक एवं जलवायु परिस्थितियों में इतनी अधिक विविधता विद्यमान है कि यहॉ के निवासियों एवं उनकी कला एवं संस्कृति में भी यह स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। बुंदेलखण्ड भारतीय उपमहादीप का ऐसा ही भू-भाग हैं। बुंदेलखण्ड का ये क्षेत्र 24°00'-26°00' उत्तर से 78° 10'-81°30' पूर्व तक फैला हुआ है। इस क्षेत्र का कुल क्षेत्रफल 54,560 वर्ग कि0मी0 है। तथा इसकी जनसंख्या 1,83,53,044 है। राजनितिक रूप से इसमें उत्तर प्रदेश के के सात (07) जिले - चित्रकूट, बांदा, हमीरपुर, महोबा, झांसी, ललितपुर, जालौन एवं मध्य प्रदेश के छः (06) जिले - दतिया, टीकमगढ़, सागर,दमोह, छतरपुर एवं पन्ना सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त भिड़ जनपद की लाहर तहसील एवं ग्वालियर जनपद की भांडेर तहसील भी भौगोलिक रूप से बुदेलखंण्ड से ही सम्यता रखती है। नदी तंत्र के आधार पर बुंदेलखण्ड की सीमाए, उत्तर दिश में यमुना नदी, पश्चिम एवं पश्चिमोत्तर सीमा क्रमशः चंबल एवं सिंध नदिया तथा पूर्व में टोस नदी निर्धारण करती है।[1]

बुंदेलखण्ड़ का इतिहास आरम्भ से गौरवशाली रहा है। महाकाव्य काल से इस क्षेत्र के इतिहास के बारे में जानकारी मिलती है कि अगस्त मुनी इस वनाच्छादित क्षेत्र में आये एवं कालिंजर को अपनी तपस्थली बनायी। रामायण के अनुसार दण्डकारण्य क्षेत्र चित्रकूट से प्रारम्भ होता था तथा अयोध्या के भागवान राम यहॉ आके ठहरें थे। कालान्तर में ये क्षेत्र भगवान राम के अनुज भ्राता श्री शत्रुध्न के पुत्र शत्रुधाती के अधिकार में